International Journal of Applied Research 2020; 6(8): 430-432

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2020; 6(8): 430-432
www.allresearchjournal.com
Received: 26-06-2020
Accepted: 30-07-2020

डॉ० राज कुमार राय
पूर्व गवेषक, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० राज कुमार राय
पूर्व गवेषक, स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

मिथिला-विमर्श

डॉ० राज कुमार राय

प्रस्तावना

मिथिलास्थः स योगीन्द्रः क्षणं ध्वात्वाऽब्रवीन्मुनीन्।
यस्मिन् देशे मृगः कृष्णस्तस्मिन्धर्मान्निबोधत॥[1]

अर्थात् मिथिला के योगियों को यह कहते हुए सुना है कि जिस देश में कृष्ण मृग स्वच्छन्द रूप से स्वभावतः विचरण करता है, उस देश में अनुष्ठ धर्मों की ओर आकृष्ट करते हुए आचार्य याज्ञवल्क्य ने अपनी अनुशंसाएँ की हैं, जिसका सद्यः प्रभाव मिथिला के लोक-जीवन पर देखने को मिलता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि मिथिला के लोक-जीवन का आधर ही याज्ञवल्क्यस्मृति में वर्णित तथ्यों का अनुपालन है। वैसे तो मिथिला के इतिहास को देखने से ऐसा लगता है कि विशाल क्षेत्र में अवस्थित मिथिला की पावन भूमि याज्ञवल्क्य की स्मृति में वर्णित तथ्यों से युक्त है, जिसका अनुसरण मिथिलावासी सदा करते हैं। जहाँ तक भूभाग का प्रश्न है, प्राचीन ऐतिहासिक काल में पुराणों के लेखानुसार मिथिला के अन्तर्गत वर्तमान नेपाल राज्य की तराई-भूमि का विशेष अंश सन्निविष्ट था। वाल्मीकीय रामायण तथा विष्णु, वायु, स्कन्द एवं श्रीमद्भागवत आदि पुराणों में मिथिला की सीमाओं का उल्लेख नहीं है। परन्तु गंगा के उत्तर के भू-भाग में मिथिला एवं वैशाली नामक दो राज्य थे, उसका पता वाल्मीकीय रामायण और मार्कण्डेय, विष्णु तथा अन्य पुराणों के अध्ययन से लगता है। उन दोनों राज्यों के बीच सीमा क्या और कहाँ थी, इसका वर्णन ग्रन्थों में नहीं है।

तीरभुक्ति अथवा तीरहुति वा तिरहुत मिथिला के परवर्ती नाम हैं। मिथिला-खण्ड बृहद् विष्णुपुराण का एक भाग माना जाता है। उसके अनुसार तीरभुक्ति के पूर्व में कौशिकी (कोशी), पश्चिम में शालग्रामी (नारायणी, गंडकी अथवा सदानीरा), दक्षिण में गंगा और उत्तर में पर्वतराज हिमालय का अरण्य-प्रदेश सुशोभित है। पूर्वोक्त सीमाओं के बीच वर्तमान दरभंगा, मुजफ्फरपुर और चम्पारण जिलों के सम्पूर्ण भू-भाग एवं मुंगेर, भागलपुर तथा पूर्णियाँ जिलों के अंश नेपाल की तराई-भूमि आ जाती है। बृहद् विष्णुपुराण के मिथिला-खण्ड में मिथिला (तीरभुक्ति) की सीमाओं के विषय में निम्नांकित रूप से वर्णन किया गया है-

गंगाहिमवतोर्मध्ये नदी पंचदशान्तरे।
तैरभुक्तिरिति ख्यातो देशः परमपावनः॥
कौशिकीन्तु समारभ्य गण्डकीमधिगम्य वै।
योजनानि चतुर्विंशद् व्यायामः परिकीर्त्तितः॥
गंगाप्रवाहमारभ्य यावद्वैमवतं वनम्।

विस्तारः षोडश प्रोक्तो देशस्य कुलनन्दन॥
मिथिला नाम नगरी समस्ते लोकविश्रुता।
पंचभिः कारणैः पुण्या विख्याता जगतीत्रये॥[2]

वृहद्विष्णुपुराण के उपर्युक्त उद्धरण के अनुसार मिथिला जनपद की लम्बाई 24 योजन अथवा 192 मील तथा चैड़ाई 16 योजन अथवा 128 मील थी और उसके उत्तर में पर्वतराज हिमालय का आरण्य प्रदेश, दक्षिण में हिमवत्-प्रभवा पुण्यसलिला गंगा नदी, पूरब में परम चंचला कोशी नदी की वेगवती धरा और पश्चिम में गण्डकी नदी है। गण्डकी नदी को नारायणी एवं सदानीरा भी कहा जाता है, जो हाजीपुर के निकट बिहार राज्य की राजधनी पटना (प्राचीन पाटलीपुत्र) के सामने गंगा से मिलती है। यह नारायणी गंडक, बूढ़ी गंडक से भिन्न है। वैदिक एवं ब्राह्मण काल में नारायणी गंडक का नाम सदानीरा था। पर पाश्चात्य विद्वान् पार्जीटियर एवं ओल्डेनवर्ग इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते हैं। उनके मतानुसार सदानीरा रापती नदी का पुरातन नाम है। सम्प्रति नारायणी गण्डक को जनता शालग्रामी नाम से भी पुकारती है, क्योंकि उसके उद्गम-स्थान से ही विष्णु की पावन प्राकृतिक प्रस्तर मूर्ति शालिग्राम की प्राप्ति होती है-

गण्डकीतीरमारभ्य चम्पारण्यान्तकं शिवे।
विदेहभूः समाख्याता तैरभुक्त्यभिधः स तु॥ [3]

मिथिला के प्रख्यात विद्वान् कविवर पं. चन्दा झा ने मिथिला और तीरहुति अथवा तिरहुत की सीमाओं का अंकन नीचे लिखे छन्द में किया है-

गंगा बहथि जनकि दक्षिण दिशि पूर्व कौशिकी धरा।
पश्चिम बहथि गंडकी उत्तर हिमवत वन विस्तारा॥
कमला, त्रियुगा, अमृता, धेमुरा, वागमती कृत सारा।
मध्य बहथि लक्ष्मणा प्रभृति से मिथिला विद्यागारा॥

विख्यात विद्वान् डा. गंगानाथ झा ने मुगल के पूर्वज महेश ठाकुर को मिथिला राज्य प्रदान के सम्बन्ध में उर्दू अक्षरों में अंकित प्रमाण-पत्र (सनद) से मिथिला की सीमाओं के विषय में निम्नलिखित पद उद्धृत किया है-

अज कोष ता गोस अज गंग ता संग। [4]

वहाँ 'कोश' शब्द कोशी का बोधक है तथा 'गोस' गण्डकी का पफरसी में 'संग' अथवा सघ्ग का अर्थ पत्थर (पर्वत) होता है, यथा- संगमरमर। इससे यह स्पष्ट है कि सम्राट् अकबर ने मिथिला का जो राज्य दरभंगा महाराजा के आदि पूर्वज महेश ठाकुर को दिया था, उसका विस्तार कोशी से गण्डकी तक तथा गंगा से नगराज हिमालय के वन्य प्रदेश तक था।[5]

भिन्न-भिन्न काम में मिथिला राज्य के क्षेत्र के विस्तार में परिवर्त्तन दृष्टिगत होता है। उत्तर में हिमालय के पादभाग से आरम्भ कर दक्षिण में गंगा की धरा तक, तथा पूरब में महानन्दा से लेकर पश्चिम में गण्डकी तक मिथिला का क्षेत्रफल 25000 वर्ग मील होता है।[6]

वाल्मीकीय रामायण आदि प्राचीन ग्रन्थों में इस जनपद के लिए 'मिथिला' नाम ही प्रयुक्त हुआ है। तीरहुत अथवा तिरहुत वा तीरभुक्ति नहीं। 'वाल्मीकीय रामायण' 'विष्णुपुराण' तथा 'श्रीमद्भागवत' महापुराण के अनुसार मिथिला नाम महाराज मिथि के नाम पर उद्भूत हुआ है। उस भू-भाग के प्रथम नृपति प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार सूर्यकुलोद्भव महाराज मनु के तनय इक्ष्वाकु के पुत्र निमि थे। मिथि निमि के पुत्र हुए। महाराज निमि एक बार अपने कुलगुरु एवं पुरोहित वशिष्ठ की आज्ञा के बिना ही यज्ञ करवाने हेतु गौतम को ऋत्विक् वरण कर लेने के अपराध में ऋषि वशिष्ठ का कोपभाजन बनना पड़ा तथा अन्ततोगत्वा उनके शाप से मृत्यु को प्राप्त हुए। तदुपरान्त सभी देवता एवं महान् ट्टषिगण एकत्र होकर उनकी आत्मा से पुनः मनुष्य रूप में प्रकट होने की प्रार्थना की, परन्तु उन सबों का अनुरोध स्वीकृत नहीं हुआ। ऋषियों ने उन्हें वरदान दिया कि उस काल से सतत उनका निवास मानव-निमेष (पलकों) पर रहेगा। पश्चात् उनके शरीर से उनकी समता के सुयोग्य पुत्र उत्पन्न करने की इच्छा से उन महात्माओं ने उनके शरीर को मथानी में रखकर उसका मंथन किया। उन सबों को अपने प्रयत्न में सफलता मिली और उस मंथन के फलस्वरूप 'मिथि' नामक उनके एक पुत्र का आविर्भाव हुआ, जो अपने पिता के राज्य का उत्तराधिकारी बना। उसी मिथि के नाम पर उसके द्वारा शासित भूमि का नामकरण 'मिथिला' हुआ।

मिथिला के लोक-जीवन को दृष्टिपथ में रखकर लिखा जाने वाला यह शोध-प्रबन्ध आचार्य याज्ञवल्क्य की कृति पर मूल रूप से आधरित होगा, फलतः इनके इतिवृत्त को भली-भाँति जान लेना श्रेयस्कर प्रतीत होता है। याज्ञवल्क्य का समय ईसा पूर्व 900 वर्ष एवं ईसा पश्चात् 200 वर्ष माना गया है।[7] जहाँ तक याज्ञवल्क्य का प्रश्न है, उनका स्थान दरभंगा मण्डल अन्तर्गत जगवन ग्राम, जो दरभंगा से 26 कि.मी. उत्तर में अवस्थित है। इस स्थल का नाम अपभ्रंश होकर जगवन पड़ा है, जहाँ आज भी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में एक कुआँ और ट्टषि याज्ञवल्क्य सहित उनकी पत्नीयाँ का चित्र अवस्थित है। याज्ञवल्क्यस्मृति में कुल तीन अध्याय हैं- जिनके अन्तर्गत प्रथम अध्याय में आचाराध्याय, द्वितीय अध्याय में व्यवहाराध्याय तथा तृतीय अध्याय में प्रायश्चिताध्याय वर्णित है। सभी अध्याय अपने-आप में मिथिला के लोक-जीवन से प्रयुक्त विषय-वस्तु की अनुशंसाओं से परिपूर्ण देखने को मिलते हैं, जो प्राचीन युग से लेकर अर्वाचीन युग तक अपने नैतिक तत्त्वों से जन-

जीवन को पुष्पित एवं पल्लवित करता हुआ दृष्टिगत होता है। भारतीय सामाजिक मानव-जीवन का मौलिक आधर मुख्य रूप से धर्म-परायणता का जीता-जागता स्वरूप माना गया है, जिसके अन्तर्गत अनेक विधओं के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति का लक्ष्य निर्धरित है, जहाँ धर्म, अर्थ, काम एवं आश्रमों की चर्चा भी आयी है। इसके सुव्यवस्थित क्रियान्वयन के पश्चात् ही कर्मयोग से मोक्ष की प्राप्ति होती है, अन्यथा प्रायश्चित का विधन भी सर्वमान्य माना गया है। इन्हीं त्रिविधओं की चर्चा याज्ञवल्क्यस्मृति का उपादेय तत्त्व है, जो मानव लोक-जीवन को सार्थक बनाने में सहयोगी सिद्ध होता है। वैसे तो मुख्य रूप से शताधिक स्मृतियों की चर्चा भी धर्मग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं, किन्तु प्रमुख रूप से अष्टादश स्मृतियाँ एवं अष्टादश पुराणों की चर्चा विहित मानी गई है। सभी स्मृतियों में ट्टषियों ने अपनी-अपनी अनुशंसाओं को लोक-कल्याण के लिए चर्चित किया है। किन्तु खास कर याज्ञवल्क्यस्मृति मिथिला के लोक-जीवन का अक्षुण्ण आधर माना गया है, क्योंकि महर्षि याज्ञवल्क्य का जन्म कहीं भी हुआ हो, वे अपने कर्मस्थल एवं निवास के आधर पर मिथिला के ही माने जाते हैं और ऐतिहासिक प्रमाणों के आधर पर इनकी प्रसिद्धि मिथिला से तात्पर्य रखती है, जिसकी चर्चा मैंने प्रारम्भ में ही एक श्लोक के माध्यम से किया है। अब प्रश्न यह उठता है कि मानवीय सामाजिक जीवन में व्यवहृत होने वाले आचरण, व्यवहार एवं प्रायश्चित् का स्वरूप एवं उसका अनुपालन किस तरह से याज्ञवल्क्यस्मृति के अनुरूप व्यवहृत है, उसकी चर्चा आगे के अंशों में बृहद रूप से की जाएगी।

संदर्भ:

1. याज्ञवल्क्यस्मृतिः (मिताक्षरा सहित), हिन्दी व्याख्या- डॉ. उमेशचन्द्र पाण्डेय, चैखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी-1994ई.
2. मिथिला का इतिहास, डॉ. राम प्रकाश शर्मा, कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा
3. मनुस्मृति, श्री कुल्लूभट्टप्रणीत 'मन्वर्थमुक्तिावली' (टीका सहित), सम्पादक- गोपाल शास्त्री नेने, चैखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी
4. नारदस्मृति, डॉ. ब्रजकिशोर स्वाई, चैखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी- 1996ई.
5. सम्वर्त्तस्मृति (द्वितीय खण्ड), सम्पाक- पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, प्रकाशक- डॉ. चमनशाल गौतम, संस्कृत संस्थान, बरेली, तृतीय संस्करण- 1971ई.
6. मिथिला तत्त्व विमर्श, पं. रामेश्वर झा, विरचित रा.ना. लाल, विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय- 1949ई.
7. आधुनिक साहित्य, वारर्णेय लक्ष्मीसागर, लोक भारती प्रकाशन, 15ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद